साधारणीकरण

- प्रो. विनोद तनेजा

भारतीय काव्यशास्त्र में आचार्य भरत के रस सूत्र के सन्दर्भ में उल्लिखित रस निष्पत्ति के प्रसंग में एक महत्ता रखने वाला शब्द साधारणीकरण, रस सूत्र 'विभावानुभावव्यभिचारीसंयोगाद्रसनिष्पति' के अन्तर्गत परवर्ती आचार्यों द्वारा संयोग और निष्पत्ति इन दो शब्दों की व्याख्या करने के संदर्भ में विवेचना के लिए मान्य हुआ। यूँ तो रस काव्य के संदर्भ में आनन्द स्वरूप कहा जाता है। यह माना जाता है कि लोक व्यापार में जिस तरह संवाद मूलक रस को पाकर सामाजिक प्रसन्न या सुखी हो जाता है उसी प्रकार चैतन्य रूप भावक काव्य द्वारा उपस्थित भावचित्र को प्राप्त कर आनन्दमय हो जाता है। यह आनन्द ब्रह्मानन्द सहोदर कहलाता है। अग्निपुराण के अनुसार-

आनन्द: सहजस्तस्य व्यज्यते स कदाचन
व्यक्ति: सा तस्य चैतन्य चमत्कार रसाद्वया (अग्नि. ३४०/१/२)

अर्थात् वह आनन्द किसी समय प्रकट हो जाया करता है और उस आनन्द की वह अभिव्यक्ति चैतन्य, चमत्कार अथवा रस नाम से जानी जाती है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि रस आत्मा की अभिव्यक्ति का रूप है और वह आनन्दमय है। रस वस्तुतः आनन्दानुभूति की वह उदात्त अवस्था है जिसमें व्यक्तिगत सत्ता का लोप होकर हृदय विश्वात्मा के साथ तदाकार हो जाता है। अपनी अन्याश्रित वृत्ति के द्वारा बाह्य जगत् को अन्तर्भूत कर स्वाश्रित वृत्ति से मन स्वत: आनन्दमय हो जाता है। रसानुभूति की अवस्था में हृदय जीवन और जगत् के सम्पूर्ण सम्बन्धों को छोड़कर मुक्त हो जाता है। इसी मुक्तावस्था की स्थिति में किसका संयोग होता है और कहाँ निष्पत्ति होती है, पर विचार करते हुए परवर्ती आचार्य भट्ट लोल्लट ने मीमांसा दर्शन के आधार पर आचार्य भरत के रस सूत्र की व्याख्या करते हुए संयोग का अर्थ सम्बन्ध- उत्पाद्योत्पादक, गम्यगमक और पोष्यपोषक भाव से करते हुए निष्पत्ति का उत्पत्ति- अभिव्यक्ति और पुष्टि के रूप में करते हुए अपने आरोपवाद की स्थापना इस संदर्भ में की। आगे चलकर आचार्य भट्ट लोल्लट द्वारा प्रतिपादित आरोपवाद की आलोचना करते हुए आचार्य शंकुक ने न्याय शास्त्र के आधार पर रस निष्पत्ति में अनुमाप्य- अनुमापक संबंध मानते हुए अनुमानवाद की स्थापना की जिसमें माना गया कि सामाजिकों को अनुमति ज्ञान के कारण ही रस बोध होता है।

पूर्ववर्ती दोनों व्याख्याओं की आलोचना करते हुए आचार्य भट्टनायक ने सांख्य शास्त्र के आधार पर रस सूत्र की व्याख्या की। आचार्य ने काव्यानंद को प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर रस का विषय मानते हुए आरोप और अनुमान का खंडन किया और भोज्य भोजक भाव सम्बन्ध को मान्यता देते हुए भोगवाद की संस्तुति की। आपने अभिधा=भावना और भोग को काव्य की शब्दात्मक क्रिया मानते हुए स्पष्ट किया कि अभिधा से काव्य का अर्थ, भावना से अर्थ का अनुसंधान- अर्थ का पुनः पुनः चिन्तन किया जाता है। इस स्थिति में काव्य वर्णित नायक/नायिका विशेष न रह कर साधारण हो जाते हैं। इसमें अयं निज: परोवेति का भेद

नहीं रह जाता। कवि/पात्र का भाव विशेष, विशेष का न रहकर साधारण का हो जाता है। भावना के इस व्यापार का नाम ही साधारणीकरण है, और इसी से काव्य रस का 'भोग' भावक करता है।

आचार्य भट्टनायक के बाद पूर्ववर्ती तीनों आचार्यों द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों की आलोचना करते हुए आचार्य अभिनवगुप्त ने शैवदर्शन के आधार पर रस सूत्र की व्याख्या करते हुए संयोग का अर्थ व्यंग्य व्यंजक प्रकाश्य प्रकाशक के रूप में करते हुए निष्पत्ति को अभिव्यक्ति माना। आचार्य अभिनवगुप्त ने आचार्य भट्टनायक के साधारणीकरण को व्यंजना का विभावन व्यापार बताया।

साधारणीकरण शब्द च्वि प्रत्यय के योग से बना है। साधारण+च्वि+किरण से निर्मित साधारणीकरण में च्वि प्रत्यय का प्रयोग अभूत्तदभावे अर्थात् जो वैसा नहीं उसे वैसा कर देना के संदर्भ में होता है। इस दृष्टि से साधारणीकरण का अर्थ है जो साधारण नहीं उसे साधारण कर देना। आचार्य भट्टनायक के सिद्धांत का उल्लेख आचार्य अभिनवगुप्त ने अभिनवभारती में किया है, पर साधारणीकरण के प्रस्तोता आचार्य भट्ट नायक की कोई रचना उपलब्ध नहीं है। दसवीं शती के इस आचार्य की रचना हृदय दर्पण का उल्लेख तो मिलता है पर यह रचना उपलब्ध नहीं है।

आचार्य अभिनवगुप्त द्वारा आचार्य भट्टनायक के सिद्धांत को स्पष्ट करते हुए साधारणीकरण को भावकत्व व्यापार के रूप में व्याख्यायित किया है। इसी भावकत्व व्यापार द्वारा भाव्यमान स्थायी भाव रस रूप में परिणत हो जाता है। इस स्थिति तक पहुँचने में भावक का विशिष्टता से मुक्त होना आवश्यक है। साधारणीकरण रसास्वादन से पूर्व की प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया रस के विभिन्न अवयवों को अपनी- अपनी विशिष्टताओं से मुक्त कर आस्वाद्य रूप में प्रस्तुत कर देती है।

आचार्य भट्टनायक के सिद्धांत में आचार्य अभिनवगुप्त ने कुछ संशोधन करते हुए यह स्पष्ट किया कि साधारणीकरण वैयक्तिक नहीं अपितु सामूहिक क्रिया है और समस्त भावकजन ही मुक्त भाव का सामूहिक अनुभव करते हैं। आपने स्पष्ट किया कि साधारणीकरण से अभिप्राय काव्य के भावन द्वारा भावक का भाव की सामान्य भूमि पर पहुँचना और इस अवस्था में विशेष वस्तु व्यापार का सामान्य जान पड़ता है।

आचार्य अभिनवगुप्त के पश्चात इस चिन्तन परंपरा में आचार्य धनंजय, मम्मट, गोविन्द ठाकुर, विश्वनाथ और पंडितराज जगन्नाथ जी के नाम आतें हैं। इन सभी की मान्यता है कि काव्यानंद में व्यक्तिगत रागद्वेष बाधक होते हैं। इस कारण इस आनंद की प्राप्ति के लिए लौकिक बाधाओं से मुक्ति अनिवार्य है। विशिष्टता की भूमिका छोड़कर सामान्य स्थिति में आने पर ही रसास्वादन संभव है और यही साधारणीकरण है, क्योंकि गोविन्द ठाकुर मानते हैं कि साधारणीकरण के उपरांत ही सहृदय को रस की अनुभूति होती है, पंडितराज जगन्नाथ ने आश्रय के

साथ सहृदय के तादात्म्य को विशेष महत्व दिया है। इस दृष्टि से पंडितराज ने आचार्य विश्वनाथ के मत को ही पुष्ट किया है।

संस्कृत चिन्तन परंपरा के पश्चात एक अन्तरालोपरान्त इस सैद्धान्तिक चिन्तन परंपरा में हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा साधारणीकरण चिन्तन परंपरा का उद्धार हुआ। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, बाबू श्याम सुंदर दास, बाबू गुलाब राय, पं. रामदहिन मिश्र के साथ साथ डॉ. नगेन्द्र, डॉ. निर्मला जैन, डॉ शंकरदेव अवतरे तथा डॉ. तारक नाथ बाली आदि विद्वानों ने इस परंपरा में योगदान दिया है।

आधुनिक हिन्दी साहित्य में इस चिन्तन का उद्धार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी के निबन्ध साधारणीकरण और व्यक्तिवैचित्र्यवाद से होता है। इस निबन्ध में शुक्ल जी ने इस विषय पर बड़ी सूक्ष्मता से विचार किया है। उनकी मान्यता है कि साधारणीकरण का अभिप्राय यह है कि पाठक या श्रोता के मन में जो व्यक्ति विशेष या वस्तु विशेष आती है, वह जैसे काव्य में वर्णित आश्रय के भाव का आलम्बन होती है, वैसे ही सब सहृदय पाठकों या श्रोताओं के भाव का आलम्बन हो जाती है यहाँ शुक्ल जी आलम्बन धर्म का साधारणीकरण स्वीकार करते हैं। शुक्ल जी ने यह माना है कि "कल्पना में मूर्ति तो विशेष की ही होगी पर वह मूर्ति ऐसी होगी जो प्रस्तुत भाव का आलम्बन हो सके, जो उसी भाव को पाठक या श्रोता के मन में भी जगाए जिसकी व्यंजना आश्रय अथवा कवि करता है- " शुक्ल जी के अनुसार आलम्बन (व्यक्ति विशेष) की विशिष्टता स्थिर रहती है पर उसके सामान्य गुण प्रेक्षक के साथ तादात्म्य स्थापित कर लेते हैं।

बाबू श्याम सुंदर दास जी का चिन्तन पं. केशवप्रसाद मिश्र जी के विचारों पर आधारित है उन्होंने साधारणीकरण क्रिया को योग की मधुमती भूमिका से संबंधित माना है। उनके अनुसार "मधुमती भूमिका में जिस प्रकार साधक का चित्त पूर्णतया एकाग्र हो जाता है और वह ऐसी अवस्था में पहुँच जाता है जहाँ लौकिक ज्ञान नष्ट होकर केवल आनन्द की अनुभूति ही शेष रह जाती है उसी प्रकार रसानुभूति की स्थिति में प्रमाता की चित्तवृत्तियां समंजित होकर केवल एक उद्दिष्ट भाव की अनुभूति में लीन हो जाती है।" श्याम सुंदर दास जी ने मधुमती शब्द तो पं. केशव प्रसाद जी का लिया पर उनका मत आचार्य अभिनवगुप्त के मत को ही अधिक पुष्ट करता है।

बाबू गुलाब राय जी के अनुसार "साधारणीकरण व्यक्ति का नहीं (क्योंकि उसकी मुख्य विशेषताओं की सम्पन्नता अक्षुण रहती है) वरन् उसके सम्बन्धों का होता है। कवि भी अपने निजी व्यक्तित्व से ऊँचा उठकर साधारणीकृत हो जाता है। वह लोक का प्रतिनिधि होकर भावाभिव्यक्ति करता है। पाठक का साधारणीकरण इस अर्थ में होता है कि वह अपने व्यक्तित्व के क्षुद्र बन्धनों को तोड़कर लोक सामान्य की भावभूमि में आ जाता है।"

पं. रामदहिन मिश्र साधारणीकरण में चित्त की एकरूपता की अवस्था पर बल देतें हैं। उनका कहना है कि "व्यक्तिगत साहित्य सर्वगत (Universal) साहित्य तभी हो सकता है जबकि साहित्यिक अपने को जानता है। जिस साहित्यिक की अनुभूति मे आंतरिकता रहती है, जो अपने को पहचानता है वही सार्वजनीन साहित्य की सृष्टि कर सकता है।" आगे इसे स्पष्ट करते हुए मिश्र जी कहते हैं साधारणीकरण का सार तत्व यह है कि कवि अपनी सामग्री से जो भाव उपस्थित करता है उसका अनुभव निरवच्छिन्न रूप से सामाजिक को होना। रसिकों को जो काव्यानंद प्राप्त होता है वह आस्वादन रूप होता है, इन्द्रियतृप्ति कारक नहीं। सार्वजनिक होता है वैयक्तिक नहीं। स्वानुभवजन्य होता है भ्रम्यजन्य नहीं। इस सम्बन्ध में भाषा को भावमय व रागमय होना आपने आवश्यक माना है। वे मानते हैं कि कवि को सहृदय का समानधर्मा होना चाहिए, तभी वह साधारणीकरण में समर्थ हो सकता है।

डॉ. नगेन्द्र जी ने रस सिद्धांत में साधारणीकरण प्रक्रिया पर विस्तार से चर्चा की है। आपने कवि की अनुभूति का भावक समाज से साधारणीकरण मानते हुए स्पष्ट किया है कि "अतएव निष्कर्ष यही निकलता है कि साधारणीकरण कवि की अपनी अनुभूति का होता है, अर्थात् जब कोई व्यक्ति अपनी अनुभूति की इस प्रकार अभिव्यक्ति कर सकता है कि वह सभी के हृदयों में समान अनुभूति जगा सके तो पारिभाषिक शब्दावली में हम कह सकते हैं कि उसमें साधारणीकरण की शक्ति वर्तमान है।"

डॉ. नगेन्द्र के बाद समीक्षा क्षेत्र के विद्वानों ने इस संदर्भ में नवीन उद्बोधन की दृष्टि से साधारणीकरण पर विचार किया है। डॉ. तारक नाथ बाली ने साधारणीकरण के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा "व्यक्ति विशेष के भाव या अनुभव को साधारण या सार्वभौम कर देना ही साधारणीकरण है।" उनकी मान्यता है कि साधारणीकरण का अर्थ हुआ विभावादि के वैशिष्ट्य का आरोप और उसका साधन है काव्यभाषा का वैशिष्ट्य। डॉ. बाली ने कवि की अनुभूति के साधारणीकरण को पाश्चात्य सम्प्रेषण सिद्धांत के साथ जोड़कर प्रस्तुत किया है। सम्प्रेषण को एक व्यावहारिक सत्य मानते हुए वे कहते हैं "सामाजिक तथा कवि की अनुभूति का कविता के माध्यम से सम्प्रेषण होता है और इस सम्प्रेषण के लिए कवि भाषा का विशेष प्रयोग महत्त्व रखता है।" उनकी मान्यता है कि "कवि की अनुभूति का सम्प्रेषण तभी संभव होता है जब विभावादि- काव्य सामग्री- साधारणीकरण के प्रभाव से वैशिष्ट्य से मुक्त होकर साधारण प्रतीत होतें हैं तथा इसी व्यापार के प्रभाव से सहृदय भी मोह-स्वार्थ- भावना से मुक्त होकर एक सार्वभौम संवेदना में हो जाता है।" कवि की अनुभूति का साधारणीकरण नहीं होता बल्कि साधारणीकरण व्यापार के द्वारा विभावादि का साधारणीकरण होता है जिसके कारण कवि या पात्र की अनुभूति पाठक तक पहुँचने में समर्थ हो जाती है। काव्यानुभव में सम्प्रेषणीयता की क्षमता आ जाती है।

साधारणीकरण सिद्धांत काव्य की एक बुनियादी समस्या के समाधान का एक गम्भीर प्रयास है। समस्या यह है कि काव्य में वैयक्तिक अनुभव की अभिव्यक्ति होती है मगर वह देशकाल की सीमाओं का अतिक्रमण कर सार्वभौम बनने में भी सक्षम होता है। सवाल यह है कि काव्यानुभव में वैयक्तिकता या वैशिष्ट्य का अतिक्रमण करने की यह क्षमता आ कैसे जाती है? भारतीय समीक्षा ने दसवीं शती में ही साधारणीकरण सिद्धांत द्वारा इस समस्या का समाधान दिया था।

आज मनोवैज्ञानिक आधारों पर भी इसी बात के समाधान का प्रयास किया जा रहा है. पौर्वात्य (भारतीय) व पाश्चात्य दोनों ही क्षेत्रों के मनीषी चिंतक यह तो स्वीकार करते हैं कि काव्य कवि-व्यक्ति के शक्तिशाली मनोवेगों का सहज प्रकटीकरण है जो कविता के रूप में प्रकट होता है और इसके लिए सम्प्रेषण आवश्यक है तभी वो मनोवेग व्यष्टि के न रह कर समष्टि के बन सकेंगे। यह सम्प्रेषण भावानुकूल सहज भाषा से ही संभव है। इस प्रक्रिया में व्यष्टि का समष्टि में आना ही साधारणीकरण है। कवि की अनुभूति सर्वसाधारण के साथ जुड़कर सामाजिक भावना का रूप धारण करती है। अंततः यह स्पष्ट हो जाता है कि साधारणीकरण-कवि की अनुभूति का यह साधारणीकरण एक ऐसी मिश्रित मानसिक प्रक्रिया है जिसमें अनुभूति की गहराई, कल्पना की वास्तविकता, अभिव्यंजना की निपुणता और लोककल्याण की कामना निहित होती है।

स्रोत सामग्री

1. गुलाबराय- सिद्धांत और अध्ययन
2. तारकनाथ बाली, भारतीय काव्यशास्त्र के सिद्धांत
3. नगेन्द्र- रस सिद्धांत
4. निर्मला जैन- रस सिद्धांत और सौन्दर्य शास्त्र.
5. राम चन्द्र शुक्ल- चिन्तामणि (भाग-१)
6. रामदहिन मिश्र- काव्य दर्पण
7. शिवदत्त शर्मा- रस निष्पत्ति में साधारणीकरण की भूमिका
8. श्यामसुंदर दास- साहित्यालोचन

अ) साहित्य शास्त्र कोश- राजवंश सहाय ' हीरा '

आ) हिन्दी साहित्य कोश- (भाग -१) धीरेन्द्र वर्मा

कृतकार्य प्रोफेसर हिन्दी विभाग,
गुरु नानक देव यूनिवर्सिटी,
अमृतसर- १४३००५.
संपर्क- ५०१६, जोशी पुरा ,
पोस्ट ख़ालसा कॉलेज,
अमृतसर-१४३००